' राम '

प्रार्थना
और
उसका प्रभाव

रचयिता :

श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

प्राप्ति स्थान :

श्री राम शरणम् आश्रम, स्वामी सत्यानन्द मार्ग, जीन्द रोड, गोहाना (हरियाणा)-१३१३०१

Sri Ram Sharnam Ashram, Swami Satyanand Marg, Jind Road, Gohana (Haryana), INDIA-131301

www.sriramsharnam.org

विषय सूची

	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्राक्कथन	.....	1
2.	प्रार्थना और उसका प्रभाव	.....	1
3.	प्रार्थना के प्रकार	.....	2
4.	आत्म कल्याण की कामना से प्रार्थना	.....	2
5.	परम विश्वास	.....	3
6.	आन्तरिक पुकार	.....	4
7.	लीनता	.....	4
8.	निरपेक्ष सत्य	.....	6
9.	सत्य पालन	.....	7
10.	सत्य वचन	.....	8
11.	हाँ, न, में दृढ़ता	.....	8
12.	वचन बल	.....	9
13.	दोष निवारण	.....	9
14.	परम शुचिता	.....	10
15.	मानस शुचिता	.....	10
16.	वचन शुचिता	.....	11
17.	कर्म में शुचिता	.....	11
18.	सिद्धि	.....	12
19.	मनोरथ	.....	12
20.	सम्पुट	.....	13
21.	आत्म कल्याण के पद	.....	13
22.	पर सुधार आदि के लिए प्रार्थना	.....	13.14
23.	अखण्ड जाप	.....	15
24.	सर्वोत्तम प्रार्थना	.....	15
25.	सकाम प्रार्थना	.....	16

प्राक्–कथन

प्रार्थना–पथ–प्रदर्शनी, यह लघु पुस्तक, प्रार्थना के प्रेमियों का पथ प्रदर्शन करे–इस उद्देश्य से प्रस्तुत की गई है। प्रार्थना एक प्रकार से मानसिक और शारीरिक दोनों दोषों को दूर करने के लिए अध्यात्म चिकित्सा है। यह अन्तःकरण के सूक्ष्मतर स्तर में जो दोष होते हैं उन को दूर कर देने में अचूक औषध है। निज सत्ता को, स्व चैतन्यभाव को, विमल और विशुद्ध बना देने का, सर्वश्रेष्ठ साधन है तथा भक्ति मार्ग में परम पुरुष के परम धाम में पहुँचा देने का परम उपाय है। इस लघु पुस्तक में वर्णित साधनों को भली प्रकार मनन पूर्वक, पालन करने वाले सज्जन का अपना कल्याण तो अवश्य होगा ही और वह अन्य दुःखी व्यक्तियों को भी सुख शान्ति लाभ कराने में समर्थ हो जायेगा।

प्रार्थना और उसका प्रभाव

आदि काल से धार्मिक जगत् में प्रार्थना करने की प्रथा चलती आई है। ऋग्वेद के स्तोत्रों में प्रार्थना का बहुत वर्णन है। एक प्रकार से तो ऋग्वेद के सूक्त, देव की कृपा और उस के गुण वर्णन करने में ही सुगठित हुए दीखते हैं। इन सूक्तों को देखने से प्रतीत होता है कि देव कृपा माँगना और देव के दिव्य गुणों का कीर्तन करना, यह धार्मिक जगत् की सनातनी रीति है।

प्रार्थना का शब्दार्थ यह है कि अपने अन्दर जो कामना है, जिस लाभ को हम चाहते हैं, उस के लिये विशेष भावना से और विशेष निश्चय से याचना करना। याचना करने वाले व्यक्ति में, जो किसी लाभ के लिए तीव्र भावना है, उत्कट इच्छा है, वह उस की कार्य–सिद्धि में बड़ी सहायता देने वाली है।

प्रार्थना करने वाले का अपना जीवन बहुत ऊँचा होना चाहिये, मन उस का बहुत निर्मल होना चाहिए। उस में सरलता और प्रार्थना से होने वाली सिद्धि के लिये, श्रद्धा तथा विश्वास बहुत प्रबल होना उचित है।

प्रार्थना–शील व्यक्ति जितने अच्छे आचार–विचार का होगा, जितनी अधिक प्रबल उसकी भावना होगी, जितनी बढ़ी हुई उसकी श्रद्धा होगी और प्रार्थना के फल देने वाले में जितना उस का सुदृढ़ निश्चय होगा, उतना ही उसको लाभ प्राप्त होना सम्भव है।

प्रार्थना के प्रकार

1. आत्म–कल्याण की कामना से प्रार्थना।
2. बिना स्वार्थ परहित, पर सुख–स्वास्थ्य, परोन्नति और सफलता आदि के लिये प्रार्थना करना।

ऊपर के दोनों प्रकार निष्काम प्रार्थना के परिचायक हैं।

3. अपने और अपनों के सुख–स्वास्थ्य के लिये प्रार्थना करना।
4. अपने और अपनों के धन, लाभ आदि के लिये प्रार्थना करना।
5. अपने और अपनों के जय–विजय आदि के लिये प्रार्थना करना।

ये तीनों प्रकार, सकाम प्रार्थना के कहे जाते हैं।

आत्म कल्याण की कामना से प्रार्थना

अपने चैतन्य भाव की जागृति के लिये प्रार्थना करना, अपनी चित शुद्धि के लिए प्रार्थना करना, अपने मन की विमलता के लिये प्रार्थना करना और पाप ताप की निवृति के लिये प्रार्थना करना–यह आत्म–कल्याण की कामना रूप प्रार्थना है।

भगवद्भक्ति की प्राप्ति की प्रार्थना करना, परमेश्वर में अत्यन्त प्रीति हो, उस में अचल विश्वास हो, पूरी श्रद्धा हो और संशय रहित निश्चय हो, यह भी आत्म–कल्याण कामना की प्रार्थना का सर्वोत्तम प्रकार है।

अज्ञान और कर्म–बन्ध के नाश की प्रार्थना करना और परमानन्द प्राप्ति की याचना करना, यह भी आत्म–कल्याण की प्रार्थना के अन्तर्गत है।

यद्यपि निज कल्याण आदि की कामना से प्रार्थना करना और पर सुख–स्वास्थ्य आदि के लिये प्रार्थना करना, यह एक प्रकार से कामना है परन्तु परमार्थ होने से तथा सांसारिक स्वार्थ न होने से, ऊपर कहे ये दोनों प्रकार, निष्काम प्रार्थना के ही समझे जाते हैं। जिस काम को करने में कर्ता का, इस लोक सम्बन्धी सुख, यश आदि कोई प्रयोजन न हो, उस का वह कर्म निष्काम कर्म है।

परम विश्वास

निष्काम प्रार्थना करने वाले में–प्रथम, परमेश्वर में परम विश्वास हो, जीवित निश्चय हो, परमेश्वर के अस्तित्व में उस का कदापि संशय न हो, वह परमेश्वर को अपने अंग–संग सदा समझने वाला हो। यथा जल में डुबकी लगाने पर, ऊपर–नीचे, दायें–बायें, आगे–पीछे, जल ही जल, एक नहाने वाला व्यक्ति, समझता है ऐसे ही वह निष्काम प्रार्थना करने वाला परमेश्वर के अस्तित्व को अपने सब ओर और समीप समझे। यथा पानी में तैरती हुई मछली को, पानी सहायता देता है, पवन में उड़ते हुए पंछी को पवन सहायकारी होता है, इसी प्रकार परम देव की सहायता, प्रार्थना–शील व्यक्ति अपने लिये सदा सजग और स्फुरित समझे। इसी अवस्था का नाम परम विश्वास है। ऐसा विश्वासी जन परमात्मा में ही होता है। उसका निर्मल मानस तरंग बहुत दूर तक जाता है और वह निर्दोष होता है। वह ऐसे मानस तरंग से, मनोबल का धनी, सुदूरस्थ व्यक्ति को भी चुप चाप चंगा बनाने में, सुख–स्वस्थ कर देने में और उस को समुन्नति के पथ पर चला लेने में, सफलता लाभ किया करता है। यह विश्वास की पराकाष्ठा, मनन करने से, नित्यप्रति के चिन्तन से और भगवत्–नाम के आराधन और उस के गुणों के कीर्तन करने से, अभ्यासी जन को सहज से प्राप्त हो जाती है। इसी कारण अपने आप के कल्याण के लिये, परमानन्द की प्राप्ति के लिये और बिना स्वार्थ के, दूसरों को सुखी–स्वस्थ बनाने के लिये, प्रार्थना करने के प्रकार, सन्तों, भक्तों और मुनि जनों ने अपने गीतों में, छंदों में और वाक्यों में वर्णन किये हैं। ऐसा विश्वासी जन अपने निश्चय पूर्ण मनोबल से, मानव जगत् में, चुपचाप अपने आप ही, शुभ का संचार कर सकता है; परन्तु जिस को परम विश्वास की प्राप्ति न हुई हो, वह जन विश्व के लिये और दूर–स्थित मनुष्य के लिये शुभ तरंग उत्पन्न करेगा, तो वह तरंग प्रबल न होगा, दूरगामी न होगा। वह बहुत समीप तक ही टिमटिमाते हुए दीपक की ज्योति की तरह, अपने तरंग पहुँचा सकेगा। उस को कोई बड़ा परिणाम निकलना–समझना, कोई बड़ी समझ की बात नहीं है। इसी कारण जो विश्व–कल्याण के लिये, जन सुधार के लिये और देश–देशान्तर के लिये, कामनायें, महोत्सवों में बड़े धार्मिक कृत्यों में की जाती हैं उन के परिणाम, न के बराबर ही हुआ करते हैं क्योंकि उन के कर्ताओं के भीतर परम विश्वास की मात्रा और संशय–रहित सुनिश्चित निश्चय का बल बहुत ही कम होता है।

आन्तरिक पुकार

प्रार्थना करने वाले को यह निश्चय रखना चाहिये कि उसकी परम विश्वास युक्त आन्तरिक पुकार सुनी जा रही है और वह परम पुरुष पूरी भी कर देगा। प्रार्थना–शील की आन्तरिक पुकार ऐसी होनी चाहिये जैसी क्षुधातुर शिशु की पुकार माता के सामने होती है एवं भूखे पक्षी शावक, जैसे अपनी माँ पक्षिणी को देख, मुँह खोल कर, चीं–चीं पुकारा करते हैं। मनुष्य, पशु, पक्षी, कोई भी बालक पुकारे और आतुरता से पुकारे तो उस की माँ, अति उतावली से उस पुकार को सुनती और पूरी करती है। आन्तरिक पुकार, कर्ता के विकसित नीर भरे नयनों से, उस के रोमांच से, उसके गद्‌गद् कण्ठ से निकले वचनों से और उस के हृदय के तरल अविरल तरंगों से जानी जाती है। ऐसा पुकार करने वाला विश्वासी, यह समझे कि वही पुकार कर रहा है, जहाँ उस का दाता, परम पिता परमेश्वर प्रकाशमान है।

आन्तरिक पुकार–युक्त प्रार्थना करने पर, अपने और पर के कल्याण करने में, सफलता बहुत ही सुलभ हो जाती है। ऊँची कोटि के प्रार्थना करने वाले सन्त, भक्त और ऋषि जन, अपने देव को ऐसे ही दिव्य भावों से आह्वान करते आये हैं। इसी से उन के सत्कर्म, यजन–याजन, पूजन–पाठ आदि सभी फलीभूत होते रहे हैं।

लीनता

स्व–पर के कल्याणार्थ, निष्काम प्रार्थना करने वाला, जिस भी भाव को लक्ष्य बना कर जप–पाठ करता करता, उसी जप आदि में, लीनता में चला जाए, अपने आप को लय कर दे, देश काल को, तू मैं के भेद को भूल जाए और एकाग्रता लाभ कर ले–चाहे वह कुछ एक क्षणों के लिये ही हो–तो उस समय वह सूक्ष्म स्तर में होता है; वह ब्राह्मी अवस्था में पहुँच जाता है। उस समय वह परम पुरुष दयालु, देवाधिदेव के समीपतम हुआ करता है; उस का उस स्तर में स्फुरित किया हुआ संकल्प, उल्लास, मानस तरंग–भागवत लोक के स्वर विलास के साथ ही मिला हुआ होता है; इस लिये उस तरंग की गति बहुत प्रबल, सुदूर गामिनी तथा सफलता दायिनी कही गई है।

परम विश्वास से, पूरी श्रद्धा से, सुदृढ़ निश्चय से, तत्परता पूर्वक जप आदि के आराधन करने पर यह लीनता की लय अवस्था, स्वयमेव प्राप्त हो जाती है; ऐसी अवस्था में स्थिर हो कर प्रार्थना–कर्ता जन, स्व संकल्प के बल से, अधिक से अधिक संख्या में दूसरे जनों को लाभ पहुँचाने और अपने आप को विमल, विशुद्ध बनाने में समर्थ समझा जाता है।

ऐसे प्रार्थना–शील मनुष्य के विचार अपने आप ऐसा ही विस्तार पाते हैं जैसे देदीप्यमान दीपक की ज्योति चहुँ ओर फैला करती है और प्रफुल्ल कमल की सुगन्धि, स्वयमेव सब ओर निःसृत होती रहती है। ऐसे विमल मन के, सच्चे भाव के, सुशील प्रार्थना–शील जन, यदि एकाकी अथवा मिल कर प्रार्थना करें तो उनके स्व– पर का कल्याण, सुधार, शीघ्र होना बहुत ही सम्भावित है।

मन्त्र– अविचल निश्चय हो परम,
परम पुरुष में एक।
श्रद्धा परम विश्वास हो,
संशय त्याग अनेक।।

निरपेक्ष सत्य

निष्काम प्रार्थना करने वाले में सत्यनिष्ठा निरपेक्ष होनी चाहिए। यहाँ निरपेक्ष शब्द, परम सत्य का ही बोधक है जिस में कोई भी अपवाद नहीं है। सत्य की साधना करने वाले के मन, वचन, कर्म में, आचार–व्यवहार में, मेल–मिलाप में, लेन–देन आदि अखिल क्रिया–कलाप में सत्य ही स्फुरित हो। उस के जीवन में, उसके प्रत्येक कार्य में सत्य ही बस जाए। असत्य से उसे ऐसी घृणा हो, जैसी दुर्गन्धित कीचड़ में हाथ डालने में एक विशुद्धतर मनुष्य को हुआ करती है।

भगवान श्री राम चन्द्र जी का श्रीमुख वाक्य है–''सत्यम् एवेश्वरो लोके'', जगत् में सत्य ही ईश्वर है। सत्य से टलना, सत्य को भंग कर देना, ईश्वर से नकार ही समझना चाहिये। परमेश्वर सर्व साक्षी है। जान बूझ कर उस के साक्षीपन को, अपने ज्ञान नयन से ओझल करना, उस को न मानने के समान है। स्व–आत्मा भी––''सत्यानां सत्यम्''– सर्व सत्य रूप है। उस के ज्ञान पर, चैतन्य भाव पर, लोभ मोह आदि वश, मिथ्यापन का पर्दा डाल देना–यह एक प्रकार से आत्मा को जान बूझ कर झुठलाना है। मिथ्या व्यवहार कर के, अपने अन्तः साक्षी को झूठा बना देना ही है। अपने ज्ञान के विपरीत चलना–अपने आप को लोप कर देने के बराबर समझा गया है। स्व–सत्यस्वरूप का लोप–अपने भीतर के साक्षी के ज्ञान के विपरीत कर्म करना–एक प्रकार से नास्तिक भाव ही कहा जाता है। इस लिए निष्काम प्रार्थना–शील मनुष्य को, निरपेक्ष सत्य धारण करना चाहिए। सच्चा वही जन है जो अपनी आत्मा की साक्षी के विपरीत नहीं चलता और सर्वज्ञ जगदीश्वर के समीप सर्वथा सच्चा है। ऐसी सत्य निष्ठा, गहरे सूक्ष्म लोक में उस अभ्यासी को ले जाती है जहाँ से निःसृत हुई स्फुरणायें दसों दिशाओं को संचार विस्तार करती रहती है। वह लोक परम पुरुष का ही लोक है।

सत्य पालन

सत्य पालन करने के लिये, बहुत अधिक विवेक एवं विचार पूर्ण व्यवहार करना चाहिये। अपने मानस विचारों पर जब तक पूरा वशीकार न हो तब तक मन में सत्य नहीं बसा करता। मन में निरपेक्ष सत्य स्थापित करने के लिये मानस विचार विमल होने आवश्यक हैं। वह अवस्था तभी आती है जब मन में राग–द्वेष, पक्षपात, वैर–विरोध और कलह–कपट आदि दुर्गुण न बसने पायें। धड़े–बन्दी की खींचा–तानी में, विवाद वितण्डा में, तू–तू मैं–मैं की धक्कमपेल में, सत्य का दीपक निर्वाण हुए बिना नहीं रहता। सत्य के अनुशीलन कर्ता को घृणा को भी जीत लेना चाहिये। घृणा एक घोरतर आँधी है जो मानस मानसरोवर को मलिन किये बिना कभी भी रहने नहीं देती।

पर–दोष–निरीक्षण दृष्टि भी अन्तःकरण को कालिख लगा ही देती है। निरपेक्ष सत्य के स्नेही को पर दोषों पर दृष्टि डालना, पर अवगुणों को निरखते फिरना, पर कर्मों की चर्चा चलाते रहना, किसी प्रकार भी शुभ नहीं है। उसे तो आत्म–निरीक्षण, स्वालोचन और अपने दोष देखने में समय लगाने से उस की पर –दुर्गुण–अवलोकन की वृत्ति, सर्वथा बन्द हो जाती है। सत्य को लोप करने के ऐसे ही कारण होते हैं। ऐसे ही कर्मों में उलझे हुए मनुष्य, सत्य–पथ से विचलित हुए रहते हैं। पुष्प वाटिका में विचरते हुए एक सभ्य विचारक जन के लिए, सारा समय तीखे काँटों को निरखते रहने में बिताना, किसी प्रकार भी भद्र नहीं है; उसको तो पत्रित, पुष्पित, लहलहाती बेलों को निहारने, विकसित कुसुमों को निरखने और कोमल कलियों को अवलोकन करने से आमोद मनाना चाहिये। सत्य के अनुशीलन करने वाले सज्जन को पर – गुणों पर दृष्टि डालना और पर–चरित्र को प्रशंसित करने में समय बिताना उचित है। पर–गुण देखने और पर–कर्मों की प्रशंसा करने से, अपना ही चित्त चाँद चौगुना चमका करता है। अपने ही मन में हर्ष की लहरें उठा करती हैं। सत्य के पालन करने वाले का मन वह स्थान है जहाँ सत्य के विशाल वृक्ष की जड़ जमा करती है। यदि पेड़ की मूल जड़ ही जमने न पाये–उस को ही भूमि ने मिले, तो उस को शाखा–प्रतिशाखा, टहनियाँ, पत्र, पुष्प, फल कहाँ से लगेंगे; इस कारण, सत्य–स्थापन का सब से प्रथम स्थान–मानव मन है। यह भली भांति, निरपेक्ष सत्य साधना करने वाले को समझ लेना चाहिये; निरपेक्ष सत्य मन में स्थापित हो जाने पर मनोबल बहुत बढ़ जाता है, इच्छा–शक्ति बड़ी प्रबल हो जाती है और आत्म–बल का प्रकाश होने लग जाता है।

सत्य वचन

जो विचार मन में होते हैं, वही मुख में आ कर वचन का वेश धारण कर लेते है; विचार तन्तुओं के ही वचन वस्त्र बना करते हैं। इस लिए सत्य, अपने वचनों में बड़ी सावधानी से बसाना चाहिए। सत्य वचन बोलना एक वीरता का काम है, इस से मनुष्य की साख बढ़ती है और उस में वचन बल अपने आप आ जाता है। अपने व्यवहार में, बोल चाल में, आने जाने में विचारपूर्वक सत्य बोलने का सदा उपयोग करते रहना चाहिये।

हाँ, न, में दृढ़ता

सत्य के अभ्यासी को हाँ, न, करने में बहुत विवेक विचार करना उचित है; किसी बात में, किसी कार्य में, एक बार हाँ, न, कर देने पर, फिर वह उस में दृढ़ता रखे। उस स्वीकार, नकार को बदल न डाले और किसी के बहुत कहने सुनने और आग्रह करने पर भी, न बदलने में दृढ़ रहे। कुछ काल तक तो इस को पालन करने में कठिनाई दीखेगी परन्तु अभ्यस्त हो जाने पर नकार स्वीकार साधना, सुगमा तथा सुखदा समझी जायेगी। किसी का आप गिरना बुरा है तो अन्य जन को धक्का दे कर गिराना भी बुरा है; हाँ, न, के वचन को भंग करना, अपने आप के लिये अभद्र है तो दूसरे जन को आग्रह से भंग करवा देना भी भलाई नहीं है। इसलिए निरपेक्ष सत्य–पालन के श्रद्धालु को समझना चाहिये कि बार बार की वचन प्रेरणा से, दूसरे जन के हाँ, न, रूप वचन वाक्य को बदलवाना भी अनुचित चेष्टा मात्र है। यदि इस बात का ध्यानपूर्वक अभ्यास किया जाए तो सभा–समाज में, संगति–मिलाप में, व्यवहार–कार में बड़ी मधुरता आ जायेगी और सत्य की साधना अपने आप सुगमता से पूर्ण होती रहेगी।

निरपेक्ष सत्य का इच्छुक अपने वचन–व्यवहार में, अपने प्रतिज्ञा–प्रण में पूरा और पक्का रहे। मनु महाराज का यह बहुत ही उचित कथन है किः–

''मानव मण्डल के सब काम वाणी में नियत हैं। उस को जो चुराता है वह जन सर्व चोरी करने वाला है''। अर्थात् जो बोलने वाले के मन में ठीक ठीक ज्ञान है, उस ज्ञान के विरुद्ध वचन बोलना, दूसरे से अपने ज्ञान को चुराना तो है ही अपितु, अपने आत्म–ज्ञान का भी अपहरण है; इस लिये वचन–विलास में, सत्य का निवास बहुत ही आवश्यक है। निष्काम प्रार्थना कर्ता में तो उसके वचनों का बड़ा प्रभाव है; इस से उस की वचन सिद्धि भी स्वयं हो जाती है।

वचन बल

जो जन निरपेक्ष सत्य की साधना साध लेता है, उस की वाणी में महा मोहक प्रभाव प्रकट हो आता है, उस का वचन–बल बहुत बढ़ जाता है, उस की निज– पर हितार्थ, कल्याण की प्रार्थना अथवा कामना अवश्य फलवती हुआ करती है। सत्य के साधक को समझ लेना चाहिये कि वह उस अवस्था से सोचता और बोलता है, जिस में परा वाणी–भागवत वाणी का अवतरण होता है। सत्य के सिद्ध हो जाने पर साधनाशील को परम पुरूष के धाम से पथ–प्रदर्शन और शुभ प्रेरणायें अवतरित हुआ करती है। इसलिए वाणी को सत्य–सेवन से शुद्ध बना लेना, आत्म–कल्याण–कामना करने वाले और परहितार्थी के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

दोष निवारण

प्रायः जो दोष बोलने वालों में आ जाया करते हैं, वे दोष सत्य अनुशीलन कर्ता को निवारण कर देने चाहियें। वह अपने वचनों में पर–निन्दा, पर–अपवाद, पर–दोष–वर्णन, पर–ताड़ना न आने दे। वह पर–त्रास के वचन भी न बोले। दूसरे को भड़काने वाले, भयभीत करने वाले वाक्य भी उस से न प्रकट हों। उस के वचनों में कठोरता, परुषता, कर्कशता भी नहीं होनी चाहिये। उस के कथन में मद, मान, घमण्ड, अपनी बड़ाई और अहंकार न दिखाई दें। उस के वाक्यों में कोमलता, सरलता, मधुरता, विनीतता और सुन्दरता सदा प्रकाशित रहें। उस की वाणी बिना स्वार्थ, सदा पर हित से भरी हुई हुआ करे। ऐसे सत्य वचनों के साधक, सज्जन के प्रार्थना के शब्द, पर हित के वचन, मन्त्र और महौषधियों का काम किया करते हैं।

मन्त्र– सत्य सदा निरपेक्ष हो,
बिना अपवाद विवाद।
करे हरण यह सत्य सब,

परम शुचिता (ABSOLUTE HONESTY)

निष्काम प्रार्थना करने वाले व्यक्ति में परम शुचिता, परम आर्जव, परम अमायापन का होना आवश्यक है। प्रार्थना करने की पात्रता वही जन प्राप्त कर पाता है जिस में छल, कपट, कौटिल्य, दम्भ, द्रोह आदि दुर्गुण न हों। जो परम शुचिता की साधना साध ले। महर्षि मनु के ये वाक्य सर्वथा सच्चे हैं।

'योऽर्थे शुचिर्हि सः शुचिः।
न मृद्वारि शुचिः शुचिः।।'

जो जन लेन–देन, व्यवहार–व्यापार तथा बरतन–बरताव में पवित्र है, निर्दोष है, वही शुचि है। केवल बाहर के मृत्तिका–जल से शुचि मानने वाला शुचि नहीं है। मन, वचन और व्यवहार की विशुद्धि ही विशुद्धि समझी गई है।

मानस शुचिता

मन में किसी का भी अनिष्ट–चिन्तन न करना, किसी के लिये भी ईर्ष्या की जलन न रखना, द्रोह, डाह और द्वेष के भाव न आने देना इत्यादि परम मानस शुचि के लक्षण हैं।

अपने मन–मन्दिर के भीतर दुष्ट भावों के कांटे न बिखेरने, दुर्वासनाओं से उसे मैला न बनाना, अपितु विशुद्ध विमल बनाए रखना यह मनोमयी परम शुचिता है। इस से अभ्यासी आत्म–कल्याण के लिये और पर–हितार्थ प्रार्थना करने के बहुत ही योग्य हो जाता है। इस विशुद्धि का अभ्यास, परम शुचिता के अभिलाषी को तत्परता से कर के अपने आत्म–देव को ऊँचा बनाना चाहिये; जिससे उस के हृदय की सितार के तारों की झंकार के साथ विश्वपति के स्वर का सुन्दर मिलाप हो सके। सरल स्वभाव, सच्चापन तथा कोमलता आदि गुण मानस विशुद्धि के परिचायक हैं।

वचन शुचिता

वचनों में निरपेक्ष सत्य हो, आर्जवपन हो, पर–हित हो, शुभ हो, यह वचन शुचिता को प्रकट करने वाले चिन्ह हैं। परम शुचिता के अनुशीलन करने वाले को अपने वचनों में, हेर–फेर, बनावट, दिखावा, नहीं आने देना चाहिये। जो उस का भीतर का भाव है, वह ही सरल भाव, सच्चा भाव, उस के वचनों में बसा हुआ होना उचित है।

कर्म में शुचिता

शुचिता की साधना में, कर्म शुचिता का भी बड़ा स्थान है। अपने कल्याण के कर्मों के साथ साथ जन–हित, जन–सेवा, जन–सुधार, परोपकार आदि कर्म, क्रियागत–शुचिता के प्रदर्शक हैं। शुचिता के पालक के मन, वचन और कर्म में भेद न हो। वह जैसा जाने, जैसा विचारे, वैसा ही कहे और करे। उस का विचार, कथन और कर्म एक हो। उस के ज्ञानानुसार हो। उस के कर्मों में कटुता, माया, छल और बनावट यत्किंचित् भी नहीं आनी चाहिए। शुचिता का साधक, सरल, सज्जन, शिष्ट, सभ्य, सुकर्मी, समान बर्ताव और न्याय–शीलता से बरतने वाला हो, इसी को ज्ञानवान्, परम शुचिता कहा करते हैं।

मन्त्र– रहें सच्चे मन, वचन, कर्म
शील न्याय के संग।
छल, माया, हठ, दम्भ से,
शुचिता रहे अभंग।।

सिद्धि

जिस साधक ने, परमेश्वर में, परम विश्वास, निरपेक्ष सत्य तथा परम शुचिता की साधना, भली प्रकार साध ली हो, उस को साधन सिद्धि की प्राप्ति समझी जाती है। वह निष्काम प्रार्थना करने के लिए बहुत ही योग्यता प्राप्त कर लेता है। उस के संकल्प तथा वचन, विद्युत धारा की भान्ति, सुदूर तक संचार विस्तार करते रहते हैं।

ऊपर कथित सिद्धि का धनी, सिद्ध सज्जन, अकेला ही अथवा अपने जैसे अनेक सुजनो के साथ मिल कर, किसी उत्तम स्थान में, शान्त भाव से, प्रार्थना करे तो परिणाम बहुत ही अच्छा निकलना सम्भावित होता है।

चाहे दैनिक पूजा–पाठ का स्थान हो, धर्म मन्दिर हो, वन हो, नदी तट हो, निर्जन जंगल हो, कैसा भी हो परन्तु अपने आप शान्त, राग–द्वेष, मोह–माया से शून्य हो–परम पुरुष की समीपता को विश्वास पूर्वक समझता हो–ऐसी अवस्था में, किसी उच्च भाव को लक्ष्य बना कर प्रार्थना की जाए तो अधिक सफलता हुआ करती है।

मनोरथ

अपने मन में किसी मनोरथ को धारण कर के, किसी एक पद का पाठ करना, पदों को पढ़ना अथवा परमेश्वर के नाम को जपना–प्रार्थना है। अपने शब्दों में भी याचना करना प्रार्थना का ही प्रकार है।

ऊपर कही, साधना सम्पन्न व्यक्ति, यदि स्व कल्याण की भावना से प्रार्थना करे तो जिस श्लोक, गाथा और पद में उस के मनोरथ का शब्द या वाक्य हो, उस को लक्ष्य बना कर परमेश्वर से प्रार्थना करे अथवा नाम बना कर परमेश्वर से प्रार्थना करे अथवा नाम जाप वह व्यक्ति करने लग जाए। नाम जाप, नियत रूप से किया जाए तो उत्तम है। यथा एक लाख या दो लाख आदि। जप समाप्ति पर भी, अपने मनोरथ के पद का, पाँच सात बार पाठ करना उचित है।

सम्पुट

निज मनोरथ के पद से सम्पुट दे कर भी जाप करने की रीति, पुरातन है। नाम जाप के प्रारम्भ में मनोरथ पद एक बाद पढ़ कर, एक माला अथवा अधिक मालायें जपने पर फिर उस पद को, दो बार पढ़ना चाहिए। जप समाप्ति पर, एक बार ही पद पाठ करना समुचित है।

आत्म कल्याण के पद

जगे चेतना विमलतम,
हो सत्य सुप्रकाश।
शान्ति सर्व आनन्द हो,
पाप ताप का नाश।।
बुद्धि वृद्धि विवेक बल,
आत्म बल बढ़ जाए।
सदिच्छा मानस बल बढ़े,
धृति धर्म को पाए।।

पर सुधार आदि के लिए प्रार्थना

साधनावान् व्यक्ति, किसी एक व्यक्ति के सुधार के लिए, उस के आचार–विचार के सुधारने के लिए भी प्रार्थना करे तो बहुत ठीक है। वह व्यक्ति जिस को सुधारना है, चाहे समीप हो चाहे दूर देश में हो, उसको पता हो कि उस के सुधार की प्रार्थना की जा रही है तो अच्छा है – न भी पता हो तो भी उस का सुधार होना बहुत सम्भावित है।

किसी व्यक्ति के सुधारार्थ ये वा इस जैसे और पद पढ़े जाएँ तो ठीक है।

सुधरे वह सुशील बन,
पालन कर आचार।
कर्म धर्म में रत रहे,
सब कुव्यसन निवार।।

किसी शास्त्र का श्लोक, मन्त्र, पद भी ऐसे कामों के लिये, उपयोग करना–ज्ञानी लोग कहते हैं इसी प्रकार जिस व्यक्ति ने साधन साध लिए हैं और वह निष्काम भाव से किसी के रोग को, कष्ट–क्लेश को दूर करना चाहता है, वह उस के लिए जप करे। यदि सम्पुट करना चाहे तब उसे ये पाठ सम्पुट में, उपयोग में लाने उचित हैं।

"राम नाम मुद मंगलकारी।
विघ्न हरे सब पातक हारी।।"
"जोत जब राम नाम की जगे।
संकट सर्व सहज से भगे।।"
"राम जाप है सरल समाधि।
हरे सब आधि व्याधि उपाधि।।"
"राम नाम हो सदा सहायक।
राम नाम सर्व सुख दायक।।"
"राम जाप कही ऊँची करणी।
बाधा विघ्न बहु दुःख हरणी।।"

यदि, जिस किसी व्यक्ति के कष्ट–क्लेश निवारण के लिए, नियत संख्या में जप किया जाए और वह व्यक्ति भी अपने स्थान में जप करे तो बहुत उत्तम है। यदि उस को लिख पढ़ कर के बता के नियत समय पर साधन – सम्पन्न जन जप करे और उधर वह व्यक्ति करने लग जाए तो और भी शीघ्र परिणाम निकलना बहुत सम्भावित है।

साधना सिद्ध किये हुए, जो निष्काम प्रार्थना करने वाला साधन–सम्पन्न जन है, वह यदि देश के सुधार के लिए भी प्रार्थना करे तो वह बहुत उत्तम कर्म है।

सदाचार सत्कर्म का,
करें पालन सब लोग।
मेल सकता साध के,
हरें देश के रोग।

परन्तु साधन–सम्पन्न जन को यह बात सदा स्मरण रखनी चाहिए कि किसी को कष्ट–क्लेश देने के लिए प्रार्थना करना, किसी को हानि पहुँचाने के लिए प्रार्थना करना, अन्याय के लिए प्रार्थना करना, किसी झूठे जन को सच्चा बनाने के लिए प्रार्थना करना, किसी सच्चे अपराधी को मुक्त कराने के लिए प्रार्थना करना, किसी पक्षी–प्रतिपक्षी में से किसी एक को विजेता बनाने के लिए प्रार्थना करना, कोई अनुचित वस्तु प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करना इत्यादि सब प्रकार की प्रार्थनायें, सन्तों ने वर्जित की हैं। ऐसे कामों में अपने इष्ट देव को आह्वान करना किसी प्रकार भी समीचीन नही है।

जप पाठ रूप प्रार्थना करने वाले के लिए न तो अपनी प्रार्थना का वर्णन करना ही अच्छा है और न ही उस का अभिमान। ऐसे कर्म बड़े शुद्ध भाव से किए जाते हैं। उन को मान बढ़ाई और अपनी आजीविका के लिए साधन बनाना विपरीत कर्म है। एक उत्तम कर्म का विक्रय है जो उस कर्म को निष्फल बना देता है।

अखण्ड जाप

लोक–हित की प्रार्थनाओं में अखण्ड जाप की प्रार्थना का एक बहुत ही उत्तम स्थान है जहाँ तक बन पड़े, अखण्ड जाप में भाग लेने वाले व्यक्ति पूर्ण विश्वासी हों और अखण्ड जाप के दिनों में सत्य, संयम आदि व्रतों के पालन करने में तत्पर रहें। जाप के समय, बड़े भक्ति भाव से स्मरण किया करें। श्रद्धालु विश्वासी जन को जप–स्थान में अपने इष्ट देव की अभिव्यक्ति ही समझनी चाहिए। इस लिए उस स्थान में बड़े आदर और गंभीर भाव से जप किया जाए।

अखण्ड जाप घण्टों, पहरों और कई दिनों के लिए भी रखे जाते हैं। अपनी सुविधा के अनुसार ही ऐसे कृत्य करने होते हैं। निष्काम अखण्ड जाप में जो उद्देश्य–पद, पाठ करने योग्य है, वह बहुत श्रेष्ठ है।

''वृद्धि आस्त्कि भाव की, शुभ मंगल संचार।
अभ्युदय सद्धर्म का राम नाम विस्तार।।''

इस पद को अखण्ड जाप के आरम्भ में पांच–सात बार और समाप्ति पर भी पांच सात बार पढ़ना चाहिए।

यदि परम विश्वास, निरपेक्ष सत्य तथा परम शुचिता रूप साधन–सम्पन्न, एक व्यक्ति अथवा अनेक व्यक्ति मिल कर ऊपर कथित अखण्ड जाप करें–तो उनके संकल्प का प्रवाह, बहुत प्रबल होगा और उस का परिणाम भी अधिक उत्तम होगा। साधारण अखण्ड जापों में यदि एक भी साधन–सम्पन्न व्यक्ति सम्मिलित हो तो भी जाप का फल बहुत अच्छा होना बहुत ही सम्भावित है।

सर्वोत्तम प्रार्थना

नाम जाप सर्वोत्तम प्रार्थना है। नाम जपना, परमेश्वर को आह्वान करना, कहा गया है। इससे अपने परमेष्ट देव की सन्निधि, स्वयमेव प्राप्त हो जाती है–और अभीष्ट प्राप्ति भी। साधन–युक्त व्यक्ति, निष्काम प्रार्थना करता हुआ अपने इष्ट देवाधिदेव का नाम देव रूप ही समझ कर स्मरण करे। ऐसी भावना से जप करते हुए उस में लीनता, सुलभ और शीघ्र हो जाती है। उस अवस्था में, पथ–प्रदर्शन, अपने आप ही होने लग जाता है। सन्त शैली में नाम का आराधन एक रहस्य–वाद है। इस का ऊपर का स्वरूप तो नाम की रटन ही है परन्तु इस के अन्दर योग का सम्पूर्ण रूप– बीज में वृक्ष की भांति–निहित है। यह सार मर्म, सर्वत्र, जप पाठ करने वालों में प्रकट होना, एक कठिन कार्य है। इस रहस्य–वाद के मार्ग में नाम आराधन, सब से श्रेष्ठ कहा गया है। रहस्य–पथ के पथिक जन, पुरुषोत्तम के परम पावन नाम को महा शक्ति का कोष तथा केन्द्र मानते आए हैं। इस शैली में साधक को नाम देना साधन–सम्पन्न की दृष्टि में

उस के आत्म–भाव को जागृत करना है। उस की प्रसुप्त शक्ति को जगा देना है और उस की अविद्या की ग्रन्थि को भेदन कर देना है तथा उस पर पड़े माया के आवरण को उठा कर, उस की चेतना को चैतन्य बनाना है। यह रहस्य–पथ परम विश्वास का पथ है तथा परम प्रभु की कृपा का मार्ग है।

सकाम प्रार्थना

जो जन अपने और अपने बन्धुओं के लिए – इस लोक का सुख स्वास्थ्य दृष्टि में रख कर प्रार्थना करें, उनमें भी परमेश्वर का पूर्ण विश्वास होना अत्यावश्यक है। वे प्रार्थना के दिनों में जितना अधिक संयम रख सकें, जितना अधिक सत्य आदि व्रतों का पालन कर पाएँ उतना ही अधिक अच्छा है। जिस व्यक्ति के सुख स्वास्थ्य के लिए अथवा सफलता के लिए कोई सकाम कर्मी प्रार्थना अथवा जप करे, वह बड़े निश्चय के साथ तत्परता से करे। यदि किसी रोगी को कोई औषधि भी दी जा रही हो तो उस औषधि का बल अधिक बढ़ जाएगा और रोगी को अधिक शीघ्र लाभ होगा। सकाम प्रार्थना करने वाले सुजन, जितना जप पाठ करना नियत कर दें, उतना उस पाठ को दत्त–चित्त हो कर के करना उचित है। वे यह दृढ़ निश्चय रखें कि उन का जो कार्य है वह किसी को हानि पहुँचाने वाला नहीं, राग–द्वेष का नहीं, केवल एक जन के सुख स्वास्थ्य के लिए है। वह अवश्य हो जाएगा। जिस स्वजन के सुख स्वास्थ्य के लिए वे प्रार्थना कर रहे हैं, उस को अवश्य लाभ होगा।

यह विधि, अधिक लाभ कारिणी कही गई है कि जिस व्यक्ति के लिए जप पाठ किया जाए, जिस समय किया जाए उस समय, वह व्यक्ति भी, जितना उस से हो सके, जाप करे।

मन्त्र जाप रूप औषधि, मानस और कायिक, दोनों प्रकार के दोषों को दूर कर देती है। इसमें जीवन–जड़ को, प्राण तत्व को अच्छा बना देने का सामर्थ्य है। किसी मनुष्य के भोक्तव्य कर्म प्रबलतर भी हों तो भी जप–प्रार्थना से वेदना की अल्पता और मानस शान्ति का अनुभव, उसको, अवश्य ही होगा।

सब धर्मों की आधार शिला, भगवद् भक्ति है। अध्यात्म ज्ञान का भव्य भवन तथा सद्धर्म का विशाल प्रासाद, प्रार्थना की अभेद्य भित्ति पर ही खड़ा हो रहा है। यह प्रार्थना रूप सत्कर्म, सदाचार और श्रेष्ठतर जीवन का मूल ही जानना चाहिए।

..... इति .....